नियमसार जीव अधिकार, ७वीं गाथा।

णिस्सेसदोसरहिओ केवलणाणाइपरमविभवजुदो।
सो परमप्पा उच्चइ तव्विवरीओ ण परमप्पा।।७।।

सब दोष रहित अनन्त ज्ञान-दृगादि परम विभवमयी।
परमात्मा है वह किन्तु तद्विपरीत परमात्मा नहीं॥७॥

परमात्मा शरीरसहित तीर्थंकर की व्याख्या है। शरीरसहित परमात्मा कैसे होते हैं? **यह तीर्थंकर परमदेव के स्वरूप का कथन है। आत्मा के गुणों का घात करनेवाले...** लो, भाषा तो ऐसी है। भाषा का अर्थ करे, समझे तो... यह तो निमित्त से कथन है। **आत्मा के गुणों का घात करनेवाले...** अर्थात् स्वयं आत्मा का भावघातिकर्म से घात करे, तब

निमित्त घातिकर्म हों, उन्हें यहाँ घात करनेवाले कहा जाता है। यह शास्त्र में लिखा है, वह कहते हैं, लो!

मुमुक्षु : किस नय का कथन है, यह समझना चाहिए न?

पूज्य गुरुदेवश्री : नय-वय कैसा? भगवान का कहा हुआ है या नहीं? ऐई!

मुमुक्षु : भगवान दो नय द्वारा कहते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : तुम कल कहते थे न? भगवान का कहा हुआ है या नहीं, बस!

मुमुक्षु : आया न, इसमें शुरुआत में कि भगवान का कथन दो नय द्वारा सर्व सत्यवादी है।

पूज्य गुरुदेवश्री : दो नय बराबर है। यह एक नय है न परन्तु...

आत्मा के गुणों का घात करनेवाले... भगवान आत्मा अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त आनन्द, अनन्त वीर्य, ऐसा इसका स्वभाव है। इसकी पर्याय में स्वयं अपने स्वभावभाव में से हटकर हीनदशारूप जीव स्वयं के कारण से ज्ञान-दर्शन-वीर्य और मोह में परिणमता है, तब ये घातिकर्म निमित्त कहे जाते हैं। आत्मा के ज्ञान, दर्शन, आनन्द और वीर्य—ऐसी जो आत्मा की पूर्ण शक्ति, उसकी वर्तमान दशा में, स्वयं ही आत्मा हीनदशारूप परिणमता है। ज्ञान, दर्शन और वीर्य और विपरीतरूप मोहरूप परिणमता है, उसमें निमित्तपना घातिकर्म का होता है; इसलिए घातिकर्म ने गुण का घात किया, ऐसा कहने में आता है। समझ में आया? दो प्रकार कहेंगे। पूर्व के अठारह दोषरहित और इन दोषरहित, दो। **आत्मा के गुणों का...** ऐसा शब्द आया न?

मुमुक्षु : ऐसे तो गुणों को कहाँ घातता है? पर्याय में है।

पूज्य गुरुदेवश्री : गुण तो त्रिकाल है। गुण की वर्तमानदशा में भावघातिरूप स्वयं परिणमता है। यह विवाद तुम्हारे, ऐई! जेठाभाई! कर्म के कारण भटकता है, कर्म के कारण घात करे, बड़ा प्रश्न (संवत्) २००६ के वर्ष में रामविजय का पालीताणा में था। कर्म के कारण भटके, कर्म के कारण घात होता है। जाओ, तीर्थंकर भगवान, ऐसा कहते हैं, तुम मानते नहीं।

यहाँ यही कहते हैं। **आत्मा के गुणों का घात करनेवाले....** अर्थात् आत्मा की

वर्तमान दशा की हीनदशा में निमित्त होनेवाले घातिकर्म। **ज्ञानावरणीकर्म, दर्शनावरणीकर्म, अन्तरायकर्म तथा मोहनीयकर्म हैं,..** ये चार हैं। **उनका निरवशेषरूप से प्रध्वंस कर देने के कारण...** पहले निर्दोष की व्याख्या ऐसे करते हैं, फिर दूसरी लेंगे। **उनका निरवशेषरूप... (कुछ भी शेष रखे बिना) से प्रध्वंस कर देने के कारण...** प्र—विशेष, ध्वंस किया होने से **(कुछ भी शेष रखे बिना, नाश कर देने से) जो 'निःशेषदोषरहित' हैं...** निःशेषदोषरहित। पहला पद, गाथा का पहला पद—**णिस्सेसदोसरहिओ** नास्ति से बात की।

अथवा पूर्व सूत्र में (छठवीं गाथा में) कहे हुए अठारह महादोषों को निर्मूल कर दिया है;... देखा! दोष को निर्मूल किया। उन घातिकर्मों का नाश किया, ऐसा पहले कहा। अब दोषों का नाश किया, ऐसा (कहा) वापिस। समझ में आया? **अठारह महादोषों को निर्मूल कर दिया है; इसलिए जिन्हें 'निःशेषदोषरहित' कहा गया है...** सर्वथा दोषरहित है।

मुमुक्षु : कर्म से आये वे अपने भाव से।

पूज्य गुरुदेवश्री : अपनी पर्याय है। अठारह दोष उनकी दशा में थे, वे आत्मा ने अभाव किये। पश्चात् कारण है, वह सब देंगे।

और जो 'सकल-विमल'.... उनका (दोषों का) नाश किया और प्रगट क्या हुआ? **(सर्वथा निर्मल) केवलज्ञान-केवलदर्शन,...** केवलज्ञान प्रगट हुआ। देखो! यह अरिहन्त की व्याख्या। णमो अरिहंताणं, णमो अरिहंताणं करते हैं। यहाँ तीर्थंकर देव की मुख्य व्याख्या है। कहते हैं **'सकल-विमल' (सर्वथा निर्मल) केवलज्ञान-केवलदर्शन,...** टीका में केवल दृष्टि शब्द है, तथापि अर्थ तो केवलदर्शन का ही यहाँ हो सकता है। संस्कृत में यह है केवल बोध, केवलदृष्टि। जिन्हें **'सकल-विमल (सर्वथा निर्मल) केवलज्ञान -केवलदर्शन,...** प्रगट हुआ है, उन्हें परमात्मा कहते हैं।

परमवीतरागात्मक आनन्द... आहा..हा..! लो, परम वीतरागस्वरूप आनन्द जिन्हें प्रगट हुआ है। यह जगत के सुख की कल्पनायें, ये सब दोषरूप, दुःखरूप जहर है। यह तो परमवीतरागस्वरूप आत्मा... परमवीतरागस्वरूप आत्मा से प्रगट हुआ आनन्द। वीतरागी आनन्द जिन्हें प्रगट हुआ है। आहा..हा..! **इत्यादि...** पश्चात् उन्हें योग्य जितने गुण प्रगट हुए हैं, वे सब। **अनेक वैभव से समृद्ध हैं...** यह वैभव, लो! परमात्मा का यह वैभव है, अज्ञानी का यह सब शरीर और बाहर का वैभव, बाग और बगीचा, अज्ञानी ने धूल में वैभव माना है।

धर्मी-परमात्मा का अनन्त-अनन्त बेहद केवलज्ञान, केलवदृष्टि अर्थात् दर्शन और केवल अकेले वीतरागस्वरूप आनन्द, अतीन्द्रिय वीतरागस्वरूप आनन्द, अतीन्द्रिय वीतरागस्वभाव से आनन्द और अनन्त वीर्य। **इत्यादि अनेक वैभव से समृद्ध हैं...** पाठ में है न? **परमविभवजुदो** यह परमात्मा को वैभव होता है। समझ में आया? शरीर परम औदारिक और रोगरहित, इस बात को यहाँ गिना नहीं है। वह तो बाह्य में गया। ऐसा जिन्हें वैभव प्रगट हुआ है, ऐसे परमात्मा को जो पहिचाने, माने और अपने स्वभाव पर दृष्टि जाये, क्योंकि परमात्मा स्वभाव में से हुए हैं। अभी आयेगा। **अनेक वैभव से समृद्ध हैं—ऐसे जो परमात्मा,...** वर्तमान में परमेश्वरदशा, शरीर में रहे हुए होने पर भी, शरीरसहित दिखने पर भी, अन्तर में ऐसी ऋद्धि, वीतरागस्वरूपी आनन्द। केवलज्ञान, दर्शन और वीर्यादि प्रगट हुए।

अर्थात् त्रिकाल निरावरण... अब ऐसे परमात्मा कैसे हुए? इसकी साथ ही व्याख्या करते हैं। तीर्थंकरदेव परमात्मा ऐसी दशा को कैसे प्राप्त हुए? त्रिकाल निरावरण भगवान आत्मा का स्वरूप, ध्रुव-ध्रुव कारणपरमात्मा, त्रिकाल ज्ञायकभाव, ध्रुवभाव, नित्यभाव, सदृश एकरूप त्रिकाली भाव, वह त्रिकाल निरावरण है। उसे आवरण था और आवरण टले, ऐसा उसमें नहीं है। आहा..हा..!

अर्थात् त्रिकाल निरावरण, नित्यानन्द-एकस्वरूप... नित्य जिसका आनन्द, ऐसा स्वरूप भगवान आत्मा का है। **नित्यानन्द-एकस्वरूप...** एकस्वरूप आनन्द। कम-ज्यादा या भेदवाला आनन्द नहीं। ऐसा प्रत्येक आत्मा का त्रिकाली नित्यानन्द एकस्वरूप स्वभाव है। नीचे स्पष्टीकरण है, देखो। **नित्यानन्द-एक स्वरूप=नित्य आनन्द ही जिसका एक स्वरूप है, ऐसा। (कारणपरमात्मा, त्रिकाल आवरणरहित है...)** कौन कारणपरमात्मा? इस आत्मा को उपजानेवाला कारणपरमात्मा। उन्हें? कार्यपरमात्मा को उपजानेवाला आत्मा। क्या कहा? नहीं समझे? कार्यपरमात्मा जो पर्याय में हुआ, उसे उपजानेवाला कारणपरमात्मा अपना त्रिकाल (स्वभाव)। द्रव्य कारण है, कार्य पर्याय है।

(नित्य आनन्द ही जिसका एक स्वरूप है।) भगवान आत्मा का ध्रुवस्वभाव, नित्यस्वभाव, नित्य आनन्द उसका एक रूपस्वरूप है! देखो! आनन्द से यहाँ शुरु किया, देखा! आहा..हा..! **(प्रत्येक आत्मा, शक्ति-अपेक्षा से निरावरण...)** नीचे नोट में है।

प्रत्येक आत्मा अन्तर शक्ति, आत्मा सत् का सत्व, तत् का तत्त्व—ऐसा जो शक्तिरूपभाव, वह त्रिकाल निरावरण है। **(एवं आनन्दमय ही है;...)** शक्ति को आवरण नहीं; स्वभाव को, गुण को, ध्रुव को आवरण नहीं और नित्य आनन्दस्वरूप है। **(इसलिए प्रत्येक आत्मा, कारणपरमात्मा है।)** इसलिए प्रत्येक आत्मा शक्ति अपेक्षा से, ध्रुव अपेक्षा से निरावरण और आनन्द होने से कारणपरमात्मा है। आहा..हा..! समझ में आया? आत्मा, उसकी उत्पाद-व्यय की जो पर्याय है, उसे छोड़कर, त्रिकाली ध्रुव नित्य अनादि अनन्त अविनाशी वस्तु, वह अपनी शक्ति अपेक्षा से निरावरण और नित्य आनन्द एकरूप है। आहा..हा..!

(इसलिए प्रत्येक आत्मा, कारणपरमात्मा है।) प्रत्येक आत्मा, अभव्य का आत्मा भी कारणपरमात्मा है। आहा..हा..! पण्डितजी! 'सर्व जीव है सिद्धसम।' अन्तर शक्ति में तो सभी आत्मायें सिद्धसमान हैं। आहा..हा..! पूर्णानन्दस्वरूप जिसका और एकरूप जिसकी शक्ति, ऐसा आत्मा ध्रुव, वह प्रत्येक आत्मा उस ध्रुव की अपेक्षा से तो कारणपरमात्मा है। समझ में आया? इसे उपजानेवाला दूसरा कोई नहीं है। आहा..हा..!

मुमुक्षु : अभव्य के लिये भी लागू होगा?

पूज्य गुरुदेवश्री : वह कारणपरमात्मा है न, प्रगट नहीं कर सकता। है तो सभी आत्मा ऐसे ही हैं। शक्ति तो सबकी एक सरीखी है। यहाँ कहा न? सभी आत्मा, ऐसा कहा, देखो न! **(प्रत्येक आत्मा, कारणपरमात्मा है।)** ऐसा है न? **(जो कारणपरमात्मा को भाता है-उसी का आश्रय करता है,...)** देखो, अन्दर में यह है, निज कारणपरमात्मा की भावना से उत्पन्न। देखो! यह विवाद है न भावना का। अभी आया नहीं था? कि तुम विपरीत अर्थ करते हो। भावना का अर्थ तो चिन्तवन और ऐसा होता है।

मुमुक्षु : भावना भवनाशिनी।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह भावना अर्थात् स्वरूप की एकाग्रता। भावना अर्थात् यह विकल्प करना, चिन्तवन करना, ऐसा नहीं। देखो! मूल पाठ में है न? **निज-कारणपरमात्मा की भावना से उत्पन्न...** आत्मा कार्यपरमात्मा है। अरिहन्त तीर्थंकरदेव ने परमेश्वरपना कैसे प्रगट किया? उन्हें परमात्मपना कार्यरूप से कैसे प्रगट किया? आत्मा त्रिकाली वीतरागी आनन्द का कन्द ध्रुव, शक्तिरूप से कारणपरमात्मा है, उसकी एकाग्रता; भावना अर्थात् एकाग्रता, भाव की भावना-भाव जो त्रिकाली है, उसकी भावना अर्थात् निर्मल पर्याय, उसके द्वारा उन्हें परमात्मपना प्रगट होता है।

मुमुक्षु : पुरुषार्थ की विधि बताओ ?

पूज्य गुरुदेवश्री : पुरुषार्थ की यह विधि है।

भावना से उत्पन्न किया है। संकल्प-विकल्प से उत्पन्न होता है ? कितने ही भावना का यह अर्थ करते हैं। अभी विरोध का आया था। ब्रह्मनिष्ठ हूँ और तुम दूसरे साधारण लोगों को ऐसा समझाते हो। रतलाम का किसी पर पत्र था। आहा..हा..! भाई! ....प्रवचनसार में आता है न श्रावक का! सामायिक के काल में भी जिसे शुद्धोपयोग की भावना होती है, तब उस शुद्धोपयोग की भावना का अर्थ ऐसा कि चिन्तवन (करे) ऐसा शुद्ध है, ऐसा। ऐसा नहीं है। सामायिक सम्यग्दृष्टि की सच्ची होती है, उसे अन्दर शुद्धोपयोग होता है। उसे भावना कहते हैं।

मुमुक्षु : निजस्वरूप भाव का उपयोग।

पूज्य गुरुदेवश्री : निजस्वरूप उपयोग। समझ में आया ? सच्ची सामायिक उसे कहते हैं कि जिसे पहला आत्मा, कारणपरमात्मा त्रिकाल हूँ—ऐसा जिसे प्रथम अनुभव हो और पश्चात् स्वरूप में स्थिर होने पर उसे सामायिक में शुद्धोपयोग हो। उसे यहाँ शुद्ध -उपयोगरूपी भावना कहा जाता है। चिन्तवना... चिन्तवना नहीं, ऐसा विकल्प नहीं। समझ में आया ? पोपटभाई! यह सामायिक।

मुमुक्षु : चिन्तवना ?

पूज्य गुरुदेवश्री : चिन्तवना विकल्प में जाती है। वह नहीं, तथापि इसे चिन्तवना शब्द कहा जाता है, परन्तु यह चिन्तवना स्वरूप में एकाग्रतारूपी भावना को यहाँ चिन्तवना कही है। कहो, जेठाभाई! ऐसी सामायिक कभी की थी ? खबर नहीं।

यहाँ तो भावना शब्द में, शुद्धता अन्दर निर्मलता। कारणपरमात्मा स्वयं ध्रुव है, नित्य है, नित्यानन्द वीतराग आनन्दस्वरूप है। उसे अन्तर में ध्येय बनाकर, उसे ध्येय बनाकर, ज्ञान की वर्तमान दशा में उसे ज्ञेय बनाकर एकाग्र होने का नाम यहाँ भावना कहा जाता है। उस भावना से आत्मा कार्यपरमात्मपना पाता है। गजब काम कठिन! आहा..हा..! समझ में आया ? देखो! यहाँ अपने यहाँ है न ?

(कारणपरमात्मा को भाता है...) अर्थात् यहाँ भावना से उत्पन्न होता है, ऐसा

आया न? वस्तु शुद्ध चैतन्यध्रुव, अनन्त आनन्द का वीतरागी स्वभाव का पिण्ड प्रभु, एकरूप आनन्द जिसकी ध्रुवता, नित्यता, एकता जिसकी त्रिकाल है। उसकी भावना, उसके सन्मुख की एकाग्रता, उस कारणपरमात्मा की भावना से आत्मा तीर्थंकर कार्यपरमात्मा को अर्थात् केवलज्ञान आदि को प्राप्त हुए हैं। आहा..हा..! कहो, समझ में आया? देखो!

(कारणपरमात्मा को भाता है-उसी का आश्रय करता है,...) देखो! इसका स्पष्टीकरण किया। उस भावना का अर्थ यह है। आहा..हा..! अनादि से पुण्य और पाप के विकल्प का आश्रय किया है अथवा एक समय की अंशदशा का अवलम्बन और आश्रय किया है, वह मिथ्यादृष्टिपना है। उसने आश्रय और त्रिकाली ज्ञायक की एकाग्रता की भावना (करनी चाहिए)। उससे इसे-आत्मा को केवलज्ञान और परमात्मदशा प्राप्त होती है। देखो! इसका कारण भी यह बताया। आहा..हा..! बहुत संक्षिप्त और बहुत उत्कृष्ट। बीच में व्यवहाररत्नत्रय से कार्यपरमात्मा होते हैं, उसका यहाँ निषेध आया। यहाँ अस्ति से बात की है। पण्डितजी! व्यवहाररत्नत्रय—सम्यग्दर्शनव्यवहार.... व्यवहार कारण और निश्चय कार्य... देखो, कल ही आया था। अरे! भगवान! आहा..हा..! तू ऐसा नहीं है कि जो राग का आश्रय ले और आगे जा सके, ऐसा तू नहीं है। तेरा आश्रय लेकर आगे जा सके, ऐसा तू है। समझ में आया? बात अभी सुनने में आयी नहीं हो, वह समझे कब? कब सम्यक्त्व पावे? और कब चारित्र पावे? आहा..हा..!

कहते हैं कि वह आश्रय करता है, किसका? यह नित्यानन्द प्रभु, वस्तु अस्ति सत्ता शक्तिरूप से महाप्रभु आत्मा है, उसका जो आश्रय करे, उसकी भावना करे, वह व्यक्ति अपेक्षा से निरावरण, वह प्रगट अपेक्षा से निरावरण होता है और आनन्दमय होता है। अर्थात् क्या कहा? शक्ति त्रिकाल निरावरण और आनन्दमय है। भगवान आत्मा का त्रिकाली स्वभाव-शक्ति आनन्दमय और निरावरण है। ऐसी शक्ति की एकाग्रता से व्यक्ति में निरावरण और अतीन्द्रिय आनन्द को पाता है। आहा..हा..! समझ में आया? क्या कहा? भगवान आत्मा, अन्तर का इसका स्वभाव, नित्यस्वरूप दल, वीतराग आनन्दमय निरावरण, ऐसा उसका त्रिकाली ध्रुवस्वरूप है, वह कारणपरमात्मा है। उस कारणपरमात्मा की भावना से अर्थात् ऐसा जो भाव है, उसकी भावना अर्थात् एकाग्रता से। शक्तिरूप से निरावरण और नित्य आनन्द, वीतराग आनन्द है, वह उसकी भावना से व्यक्तरूप से निरावरण और परमानन्दरूपमय हो जाता है।

मुमुक्षु : स्वयं ही परमात्मा बन जाता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : स्वयं बन जाता है। है स्वयं, कारणरूप से तो है ही। आहा..हा..! कहो, देवजीभाई! ऐसा परमात्मा है। जहाँ है, वहाँ से मिलेगा। यह कारणपरमात्मा बाहर में है? आहा..हा..!

(वह व्यक्ति-अपेक्षा से निरावरण और आनन्दमय होता है,...) देखा? **(अर्थात् कार्यपरमात्मा होता है। शक्ति में से व्यक्ति होती है;...)** अर्थात् जो शक्तिरूप तत्त्व था, उसमें से प्रगट होता है। कारण तो त्रिकाली भगवानस्वरूप ही आत्मा है। वह शक्तिरूप है। उसकी एकाग्रता से व्यक्तिरूप आत्मा, परमात्मा को निरावरण होता है। **इसलिए शक्ति, कारण है और व्यक्ति, कार्य है।** यह आत्मा की त्रिकाली ध्रुव शक्ति, वह कारण है और वर्तमान परमात्मा अरिहन्त हों, वह कार्य है। आहा..हा..! अरिहन्त ऐसे हुए, ऐसी विधि बतायी। दूसरे प्रकार से अरिहन्त नहीं हुए हैं और जिसे परमात्मा होना हो, उसकी विधि भी यही है, दूसरी विधि नहीं है। आहा..हा..! तब यह सब क्या? यह मन्दिर, अष्टाह्निका की पूजा, धमाल, बड़े मन्दिर (बनाना)... भाई! यह तो उस काल में उसके कारण से बने होते हैं। तब स्वरूप में स्थिरता नहीं हो और दृष्टि होने पर भी उसका लक्ष्य शुभभाव आता है; इसलिए पर के प्रति जाता है, इतना शुभभाव पुण्य-बन्ध का कारण है। वह बन्ध से छूटने का कारण नहीं है। समझ में आया? आहा..हा..! देव-गुरु और शास्त्र की भक्ति और श्रद्धा भी बन्धन से छूटने का कारण नहीं है। आहा..हा..!

चैतन्य आनन्द सरोवर, त्रिकाल वीतराग आनन्द का कन्द प्रभु, वह शक्तिरूप निरावरण और आनन्द है। वही शक्ति की बारम्बार सम्हाल और एकाग्रता होने पर, व्यक्तरूप से निरावरण और वीतरागी आनन्द प्रगट होता है। उसे कार्य आत्मा, कार्यपरमात्मा कहा जाता है। आहा..हा..! समझ में आया? **ऐसा होने से शक्तिरूप परमात्मा को कारणपरमात्मा कहा जाता है...** भगवान आत्मा शक्तिरूप तत्त्व है, उसे कारणपरमात्मा कहते हैं और व्यक्त परमात्मा को कार्यपरमात्मा कहा जाता है। पण्डितजी ने सरस स्पष्टीकरण किया है। समझ में आया? उसे त्रिकाली स्वरूप का अन्तर में माहात्म्य नहीं आता और एक समय की अवस्था तथा राग का माहात्म्य नहीं टलता; इसलिए वह परिभ्रमण करता है। बहुत ही संक्षिप्त में यह बात है। समझ में आया?

सर्वज्ञ परमेश्वर ने जो प्रगट दशा की, वही शक्तिरूप तो अन्दर थी। ऐसा आत्मा। सर्वज्ञ ने कहा हुआ आत्मा, प्रगट किया हुआ आत्मा, सर्वज्ञ परमेश्वर, तीर्थंकरदेव, देवाधिदेव। दूसरे कल्पना से आत्मा की बातें करे, आत्मा ऐसा, ऐसा है, वैसा है, सर्वव्यापक है, मनुष्य प्रमाण है – ऐसा नहीं। है तो शरीरप्रमाण, शरीर से भिन्न, असंख्य प्रदेशी, अनन्त गुण का धाम—ऐसा जो ध्रुवस्वरूप भगवान, उसे यहाँ कारणपरमात्मा कहा है। जो कि प्रत्येक आत्मा ऐसा है ही। आहा..हा..! उसकी **भावना से उत्पन्न...** क्योंकि कार्यपरमात्मा, वह उत्पन्न शब्द है। कारणपरमात्मा, वह उत्पन्न नहीं था। कारणपरमात्मा तो त्रिकाल ध्रुव है ही। समझ में आया?

आहा..हा..! यह दुर्गन्ध, गन्ध, कोमल शरीर, गन्ध की मूर्ति; भगवान आनन्दघन की मूर्ति है, ऐसा यहाँ तो वीतरागस्वरूप त्रिकाल आनन्द उसमें है, वह शक्तिरूप से वीतरागस्वरूप आनन्द है। वह प्रत्येक आत्मा में है। आहा..हा..! कहीं बाहर से लाया जाये, ऐसा है नहीं। अन्दर भगवान पूर्णस्वरूप है, उस पर एकाग्र होने से, उसे कारणरूप से ग्रहण करके, जो दशा में स्वभाव-सन्मुख एकाग्र हो, उससे कार्यपरमात्मा, अरिहन्तपद, सिद्धपद आदि उससे प्राप्त होता है। कैसी बात की! व्यवहार से होता है, यह तो इसमें से निकाल दिया।

मुमुक्षु : दूसरे शास्त्र में...

पूज्य गुरुदेवश्री : दूसरे शास्त्र में अर्थात् यह तो कथन होता है, व्यवहार होता है, कैसा होता है, वह बताने के लिये (बात है); बाकी उससे कुछ होता नहीं है।

मुमुक्षु : शीघ्र मोतिया उतर जाये।

पूज्य गुरुदेवश्री : शीघ्र मोतिया उतर जाये, ऐसी बात है। रात्रि में कहा था न, तीन घण्टे बैठा रहे। पहले चौबीस घण्टे ही नहीं बैठाते थे। जल्दी मोतिया उतर जाये, ऐसी कला आयी है। आहा..हा..!

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : यही है। आहा..हा..!

तेरी दृष्टि राग और एक समय की पर्याय पर है। इसे कारणपरमात्मा पर दृष्टि डाल।

छूटा, छूटा। उसे कारणपरमात्मा के साधन अन्दर से, कारणपरमात्मा की एकाग्रता से प्रगट हुए। आहा..हा..! कहो, समझ में आया? फिर पठन कम हो, अधिक हो, वह उसके घर रहा। भीखाभाई! मतलब तो यह है। आहा..हा..! 'ढींग धणीं माथे कियो...' ध्रुव को ढींग धणी अन्दर में धारण किया। वह अन्दर ढींग धणीं धारण किया। 'कौण गंजे नर खेत।' उसे अब कौन व्यवधान कर सकता है? जहाँ परमात्मा स्वयं त्रिकाली भगवान का शरण लिया, कहते हैं कि उसका जहाँ आश्रय लिया, उसकी भावना की, (उसे कौन बाधक होगा)? इस भावना के अर्थ के लिये अधिक (स्पष्टीकरण) होता है, हों! वे भावना-बावना में कल्पना और चिन्तवना करते हैं। ऐसा कहते हैं कि सामायिक में समकिती को और श्रावक को शुद्धभाव की भावना होती है, शुद्धभाव नहीं होता, ऐसा (वे) सिद्ध करते हैं।

मुमुक्षु : आतमभावना भावता.....

पूज्य गुरुदेवश्री : यह भावना, भावना वह श्रीमद् में है, यह दूसरे (कहते हैं)। 'आतमभावना भावतां जीव लह्ये केवलज्ञान' यह वापस उनके भक्त ऐसा कहते हैं, भगवान की भक्ति करते-करते अपने को निर्जरा होती है। विपरीत बात है। समझ में आया?

मुमुक्षु : अब सार कह दो।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह सार कहा न 'आतमभावना भावतां जीव लह्ये केवलज्ञान' ऐसा शब्द है। फिर ऐसे रटा करे - 'आतमभावना भावतां जीव लह्ये केवलज्ञान'... क्या हो? आतमभावना क्या? भावना क्या?

मुमुक्षु : भाना।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, वह आत्मा अर्थात् यह कारणपरमात्मा, वह। इसकी भावना अर्थात् अन्दर में एकाग्रता, शुद्धता की एकाग्रता। उससे केवलज्ञान प्राप्त कर सकता है। कहो, प्रेमचन्दभाई! आतमभावना भावतां (-ऐसा अन्दर में रटा करे)। 'आतमभावना भावतां जीव लह्ये केवलज्ञान' तोता बोले वैसे (रटा करे)। आहा..हा..! पोपटभाई! पोपट (तोता) बोले ऐसे। तब सामायिक के पहाड़े बोले होंगे न? आहा..हा..! बहुत सरस बात ली है।

उत्पन्न कार्यपरमात्मा,... कारणपरमात्मा उत्पन्न नहीं होता, व्यय नहीं होता। वह तो ध्रुवरूप त्रिकाल है और कार्यपरमात्मा उत्पन्न होता है, क्योंकि वह पर्याय है। समझ में

आया ? एक व्यक्ति फिर कहता है लो, यह हमारी सामायिक नहीं ? सामायिक। सामायिक किये बिना धर्म होता होगा ? भाई ! सामायिक किसे कहना, तुझे खबर बिना का। आहा..हा.. ! सामायिक थी कब ? अभी कुदेव-कुगुरु-कुशास्त्र की श्रद्धा होती है। समझ में आया ? उसे समकित कैसा ? वह तो मिथ्यादृष्टि है। वह मिथ्यादृष्टि सामायिक लेकर बैठे, वह सामायिक कैसी ? मिथ्या सामायिक और विषम सामायिक है। वह तो पापरूपी सामायिक है। ऐई ! हरिभाई ! हरिभाई ठण्डे व्यक्ति हैं। लो, यह सामायिक कहलाती है। इसे पहले समझ में तो आना चाहिए न ? जहाँ समझ ही सच्ची नहीं, उसका फिर प्रयोग किस ओर करना इसे ? बाहर से लगाकर मर गया अनन्त काल से। यह सामायिक की और प्रतिक्रमण किये और प्रौषध किये। बिना इकाई के शून्य हैं। समझ में आया ?

मुमुक्षु : किसी को ऐसा कहे कि यह तो पाप है ?

पूज्य गुरुदेवश्री : पाप ही है। सेठी ने भी पहले यह सब ढोंग किये थे न !

यहाँ तो परमात्मा त्रिलोकनाथ तीर्थंकरदेव सर्वज्ञपने को प्राप्त हुए। वीतरागपना प्राप्त हुए, वे किस प्रकार प्राप्त हुए ? उसकी विधि क्या ? तो उसकी विधि ऐसी सब आत्माओं की विधि एक है। भगवान तीर्थंकरदेव अनन्त तीर्थंकर हुए, वर्तमान में विराजते हैं। महाविदेह में सीमन्धर भगवान आदि विराजते हैं। लाखों केवली हैं, अनन्त सिद्ध हो गये हैं। सब कैसे हुए ? किस विधि से हुए ? किस प्रकार से हुए ? ऐई ! जादवजीभाई !

भगवान आत्मा चैतन्यध्रुव, नित्य अविनाशी, नित्यानन्द वीतरागस्वरूपी भगवान आत्मा स्वयं है। शक्तिरूप से, सत्वरूप से, ध्रुवरूप से, भावरूप से, ज्ञायक के स्वभावरूप से यह आत्मा त्रिकाली ध्रुव ज्ञायक शक्तिरूप से है। निरावरण और वीतरागी आनन्द का कन्द प्रभु यह आत्मा है। ऐसे ध्रुवस्वभाव की दृष्टि करके, उसके ध्रुवस्वभाव में लीनता करके... यह भावना। इस भावना से (कार्यपरमात्मा हुए)। यह भावना, वह उत्पन्न है, ध्रुव में भावना, परन्तु सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र यह उत्पन्न है परन्तु उस भावना से कार्यपरमात्मा अरिहन्त सर्वज्ञदेव, अनन्त इस भावना से हुए हैं। समझ में आया ? आहा..हा.. ! कान से सुना न हो, ऐसा होगा ? रमणीकभाई ! कमाने में... कमाने में... समय जावे, इसकी अपेक्षा निवृत्त हो तो सुनने का विपरीत मिले। सच्चा क्या है, वह सुनने को मिले नहीं, अब उसका कब निस्तारा हो। समझ में आया ?

कहते हैं, भगवान! प्रभु! एक बार दूसरा भूल जा। जिसे याद करके मेरा माना है, उन्हें भूल जा और जिसे याद नहीं किया और मेरा नहीं माना, उसे याद कर। आहा..हा..! भगवान! यह शरीर, वाणी, मन तो मिट्टी-धूल है। यह तो माँस का पिण्ड है। सड़ा हुआ-सड़ा हुआ गधे की चमड़ी जैसा हो, वैसा सब इसमें है, बापू! आहा..हा..! यह तो अजीव तत्त्व है। इसमें पुण्य-पाप के विकल्प दया, दान, व्रत, भक्ति के आते हैं, वह भी विकार और राग और दोष है। उसे जाननेवाली वर्तमान ज्ञान की अवस्था भी क्षणिक और एक क्षण की दशा की पर्याय है, उतना भी तू नहीं। राग-द्वेष में नहीं, राग को जाननेवाली एक समय की व्यक्त अवस्था-इतने में भी तू नहीं, तू जो है त्रिकाल... आहा..हा..! नित्यानन्द, सहजानन्द की मूर्ति, परमात्मा सर्वज्ञदेव ने देखी उतनी, वैसी। आहा..हा..! अब क्या कहाँ जाना? समझ में आया?

मुमुक्षु : घोंट-घोंटकर पिलाओ।

पूज्य गुरुदेवश्री : चौंसठ पहरी तो घुँटती है यह।

यहाँ तो कहते हैं। यहाँ तो क्या आया है? देखो न! **निज-कारणपरमात्मा की भावना से...** ऐसा शब्द है न? भगवान तीन लोक के नाथ तीर्थंकर हो, वे उनके भगवान। अनन्त सिद्ध हुए, उनका ध्यान करे तो वह विकल्प है। यह अपनी एक समय की पर्याय का ध्यान करने जाये तो वह राग है। यहाँ तो **निज-कारणपरमात्मा की भावना....** इतने में सब भरा है। पूरा वीतराग का मार्ग, परमेश्वर का-केवलियों का (मार्ग इसमें है)। 'केवली पण्णत्तो धम्मो शरणं', बोलते हैं न? सबेरे पहाड़े बोल जाते हैं। णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, चत्तारि मंगलं, अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं... पहाड़े बोलते हैं, एक भी अर्थ की खबर नहीं होती। हरिभाई! आहा..हा..!

कहते हैं, **निज-कारणपरमात्मा...** कैसा है? कि एक तो मानो त्रिकाल निरावरण भगवान आत्मा का स्वरूप है। अन्तर स्वरूप ध्रुव नित्य भाव, वह त्रिकाल निरावरण है। एक बात। नित्यानन्द, जिसमें अतीन्द्रिय आनन्द नित्य-शाश्वत् पड़ा है। कैसे जँचे? जिसके अन्तर आत्मा के, अन्तर ध्रुवस्वरूप में सब आत्मा को, नित्यानन्दस्वरूप भगवान, अतीन्द्रिय आनन्द का कन्द स्वयं है। उसे यहाँ ध्रुव आत्मा कहा जाता है। उसे यहाँ कारणपरमात्मा कहा जाता है। वह कौन सा? कि निज कारणपरमात्मा। वापिस भाषा निज - अपना कारणपरमात्मा।

मुमुक्षु : अपना ही काम आवे न, दूसरे का क्या काम आवे ?

पूज्य गुरुदेवश्री : भगवान का भगवान के पास रहा। आहा..हा.. ! णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं करके मुक्ति हो। तीन काल में नहीं होती, कहते हैं। यह तो विकल्प-राग है।

मुमुक्षु : इसलिए निज कारण कहा है।

पूज्य गुरुदेवश्री : इसलिए निज कारणपरमात्मा कहा है। समझ में आया ?

निज-कारणपरमात्मा की... वे बहियाँ फिरावे वहाँ, गुलाबचन्दभाई ! ऐसा उसमें नहीं मिलता। वहाँ उसमें है कुछ ? नहीं। सब भाई इकट्ठे होते हों, तब भी ऐसा नहीं होता। तीन तो गये, अब तीन रहे। ये बातें ही अलग प्रकार की हैं। सम्प्रदाय में यह बात नहीं है। समझ में आया ? यह तो वीतराग सर्वज्ञ परमेश्वर का अनादि मार्ग जो है, वहाँ कहते हैं कि यह निज कारणपरमात्मा जो अनन्त आनन्द के जल से भरपूर भगवान अनादि-अनन्त आत्मा है, ऐसे निज कारण (परमात्मा की भावना)। एक तो निज शब्द प्रयोग किया। दो शब्द, एक तो त्रिकाल निरावरण, नित्य आनन्द दो; एकस्वरूप। यह त्रिकाल एकस्वरूप है और निज कारणपरमात्मा। अभेद बतलाना है न ? निज कारणपरमात्मा भगवान ध्रुवस्वरूप की भावना से। ऐसा चिदानन्द भगवान आत्मा ध्रुव, नित्य की एकाग्रता से निर्विकल्प श्रद्धा, ज्ञान और शान्ति, वह भावना है। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र जो आत्मा की वीतरागी दशा, वह परमात्मा की भावना है। समझ में आया ? उससे उत्पन्न केवलज्ञान-केवलदर्शन अनन्त आनन्द परमात्मा अरिहन्त प्राप्त हुए, वह तो उत्पन्न पर्याय हुई है। वह कोई पर्याय में पूरा आत्मा नहीं था। पूरा तो ध्रुव है। यह तो नयी दशा प्रगट हुई। सिद्धपना भी आत्मा में कार्यपरमात्म दशा नयी प्रगट होती है। आहा..हा.. ! समझ में आया ?

मुमुक्षु : एकरूप क्या ?

पूज्य गुरुदेवश्री : एक स्वरूप अभेद। नित्यानन्द एकरूप स्वरूप है। उसमें भेद नहीं है। गुण-गुणी का भेद नहीं है, पर्याय के अंश का भेद नहीं है। अरे ! आहा..हा.. ! ऐसा निजनिधान भगवान आत्मा है। कहो, समझ में आया ? अरे ! उसकी शरण में जा, तेरा दुःख नहीं रहेगा - ऐसा कहते हैं। आहा..हा.. ! देखो न, ऐसे दुःखी-दुःखी है, ऐसे दया आ जाये। दर्शनविजय को ? बेचारा।

मुमुक्षु : डोली में थे ?

पूज्य गुरुदेवश्री : डोली में थे। दो साधु सामने, पीछे मददनीश। कुछ भान नहीं। चिल्लाहट मचाते थे। क्या बोलते हैं, इसकी कुछ खबर नहीं। मैं खड़ा रहा, इसलिए मेरी अंगुली पकड़ी। कुछ भान नहीं, कुछ खबर नहीं। आहा..हा..! देखो न दशा! भगवान भूलकर कहाँ भ्रमता है ? सामने बैठकर जा रहे थे बेचारे। मेरे सामने हाथ किया। खड़ा रहा। कौन हो ? दर्शनविजय, त्रिकूट में का दर्शनविजय। ठीक। यह तो अपने यहाँ (संवत्) १९९९ में आये थे न, यहाँ बैठे थे। १९९९ में चर्चा हुई थी, कितने वर्ष हुए ? २९ वर्ष हो गये। वे कहे कि यह गुरु की वाणी है। देव की वाणी दूसरी हमारी। तुम्हारा नाम क्या ? दर्शनविजय। अच्छा। भव्य-अभव्य का निर्णय किया है ? तुम भव्य हो या अभव्य ? कहे, यह निर्णय नहीं होता। तब तुम्हें भव्य-अभव्य का निर्णय नहीं और तुम वीतराग की वाणी की परीक्षा करने निकले! कसौटी की उस समय। कुछ बड़ा भी नहीं एकदम काला बड़ा, चिल्लाहट मचावे। क्या बोलता हूँ इसकी खबर नहीं। आहा..हा..! कुछ खबर नहीं। बहुत बोल सके नहीं। यह मिथ्यात्व का खेल ऐसा है। खबर नहीं, नहीं ? खबर जैसा कुछ लगा नहीं।

कहते हैं, तीर्थंकरदेव के केवलज्ञानी के सिद्धान्त में यह अन्तर है। भाई! तुझे केवलज्ञानरूपी परमात्मदशा प्रगट करनी हो तो उसके लिये कारण तो तू अन्दर पड़ा, वह है। दूसरा कोई निमित्तकारण और मजबूत संहनन और हड्डियाँ तथा यह मनुष्य देह हो तो हो, व्यवहार समकित-फमकित हो तो हो, यह बात यहाँ है नहीं।

मुमुक्षु : मनुष्यपना भी नहीं।

पूज्य गुरुदेवश्री : मनुष्य-फनुष्य बिना का मोक्ष होता है।

मुमुक्षु : यह बात समझाओ।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह तो जड़ है, इसमें क्या है ? जड़ के अस्तित्व में तो आत्मा है नहीं। आत्मा के अस्तित्व में जड़ है नहीं। जड़ तो जड़ होकर रहा है। शरीर तो जड़ हुआ और रहा है। यह आत्मा का होकर रहा है ? यह तो मिट्टी है। समझ में आया ? अन्दर पुण्य और पाप, दया, दान के भाव, वह विकार होकर रहे हैं। वे आत्मा के होकर नहीं रहे। समझ में आया ? इसकी पर्याय में भी वास्तव में आत्मा के होकर नहीं रहे। इसने माना है। यह

आत्मा तो एक समय की पर्याय होकर रहा नहीं, ऐसा कहते हैं यहाँ तो। भाई! आहा..हा..! भगवान आत्मा पर होकर तो रहा नहीं, पुण्य-पाप के भाव होकर रहा नहीं, एक समय की अवस्था होकर रहा नहीं। वह तो त्रिकाल निरावरण भगवान सच्चिदानन्द प्रभु सिद्धस्वरूपी प्रभु, नित्यानन्द निरावरण वीतराग आनन्दमय एक स्वरूप कारणपरमात्मा है। इस प्रकार रहा है। आहा..हा..! समझ में आया?

मुमुक्षु : जाति अपेक्षा से ध्रुव बदलता नहीं।

पूज्य गुरुदेवश्री : ध्रुव क्या बदले? ध्रुव तो ध्रुव है। ध्रुव तो एकरूप त्रिकाल है। इसीलिए तो एक शब्द दिया।

मुमुक्षु : जाति अपेक्षा से बदलता नहीं, किसी दूसरी अपेक्षा से बदलता होगा।

पूज्य गुरुदेवश्री : रामजीभाई ने ठीक कहा। तीन काल में किसी प्रकार बदलता नहीं। एकरूप नित्यानन्द भगवान। निश्चय से मोक्षमार्ग की क्रिया का भी जिसमें अभाव है। राग-द्वेष का तो अभाव है, पुण्य-पाप का पहले कहा। पर्याय का अभाव है, ऐसा कहा, उसमें यह आ गया। मोक्ष का मार्ग जो यह भावना है, उससे कारणपरमात्मा रहित है। पर्यायरहित कहा था। समझ में आया? क्योंकि वह तो नित्यानन्द कहा न? नित्यानन्द एक स्वरूप भगवान आत्मा। अरे भाई! उसकी तुझे खबर नहीं। तेरी चीज़ में कितना क्या पड़ा है ध्रुव में, (उसकी तुझे खबर नहीं)। बाहर खोजने जाये, यहाँ से मिलेगा, यहाँ से मिलेगा, शत्रुंजय से मिलेगा और सम्मेदशिखर से मिलेगा।

मुमुक्षु : वहाँ सबसे नहीं मिलेगा परन्तु गुरु के पास से तो मिलेगा।

पूज्य गुरुदेवश्री : गुरु के पास कहाँ था, वह तो मिले? यहाँ तो कहते हैं, पर्याय में नहीं आया, उसमें मिले कहाँ से? ऐई! यह मार्ग अलग। वीतराग के मार्ग का दुनिया के साथ मेल खाये, ऐसा नहीं है। तुलना नहीं करना। नहीं कहा भाई ने? रमेशभाई ने, 'कमल' यह उपमा है। भगवान के मार्ग के साथ किसी मार्ग की तुलना नहीं करना। भाई! यह तुलना से मेल खाये ऐसा नहीं है।

मुमुक्षु : अनित्य से नित्य की प्राप्ति तो होती है।

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं होती है। अनित्य से नित्य की प्राप्ति होती है, इसका अर्थ,

नित्य का ख्याल आता है। अनित्य में नित्य नहीं आता परन्तु जो पर्याय अनित्य है, वह भी द्रव्य में नहीं है। आहा..हा..! गजब काम भाई यह तो! ऐसा मार्ग वीतराग का होगा? अपने जैन में तो ऐसा होता है, कन्दमूल खाना नहीं, रात्रिभोजन करना नहीं, सामायिक करना, प्रौषध करना, प्रतिक्रमण करना, अपवास (करना) क्या कहलाता है? छह परबी पालना। उसमें तो यह एक भी बात आयी नहीं।

मुमुक्षु : यह तो सब राग है, ऐसा आया।

पूज्य गुरुदेवश्री : अरे! भगवान तुझे खबर नहीं, भाई! यह तो सब विकल्प के खेल हैं। यह आत्मा नहीं और आत्मा का आचरण नहीं। आहा..हा..!

मुमुक्षु : आत्मा का आचरण....

पूज्य गुरुदेवश्री : विकल्प आदि हैं, वे इस आत्मा का आचरण नहीं। भगवान आत्मा नित्यानन्द प्रभु की एकाग्रता वीतरागपर्यायरूपी भाव में, ऐसा जो निश्चयमोक्षमार्ग है, उससे कार्यपरमात्मा... कारणपरमात्मा की भावना से होता है। मोक्षमार्ग की भावना से होता है, ऐसा भी यहाँ तो नहीं कहा। कारणपरमात्मा... आहा..हा..! तू त्रिकाल है, अनादि-अनन्त है, ध्रुव है, नित्य है, प्रभु! तेरा एकरूप है अन्दर। विकल्प की आड़ में तुझे उसकी रुचि में दिखता नहीं। दया, दान के विकल्प राग हैं, उनकी रुचि में भगवान दिखता नहीं।

मुमुक्षु : .....ध्रुवता नहीं।

पूज्य गुरुदेवश्री : ध्रुवता कहाँ है? ध्रुव तो भिन्न है। अनन्त बार क्रियाकाण्डी जैन साधु हुआ, परन्तु वस्तु का भान इसने एक क्षण नहीं किया। पंच महाव्रत और अट्ठाईस मूलगुण, शरीर से आजीवन ब्रह्मचर्य, ऐसे अनन्त बार पालन किये, वह तो सब क्रियायें राग है। वह आत्मा नहीं और आत्मा का आचरण नहीं। आत्मा ध्रुव और उसका आचरण, (वह) उसकी भावना। समझ में आया?

उत्पन्न कार्यपरमात्मा, वहीं भगवान अर्हत्परमेश्वर हैं। देखो! **वहीं भगवान अर्हत्परमेश्वर हैं।** अभी तो णमो अरिहंताणं की व्याख्या की खबर नहीं होती। अन्धानुकरण करता जाता है। णमो अरिहंताणं... णमो अरिहंताणं... णमो अरिहंताणं... समझ में आया? **वहीं भगवान अर्हत्परमेश्वर हैं।** ऐसे भगवान को-अरिहन्त को परमेश्वर कहा जाता है। बाकी लोग मानें कुछ का कुछ, वह कोई भगवान-वगवान की उन्हें खबर नहीं।

इन भगवान परमेश्वर के गुणों से विपरीत... इस प्रकार कारणपरमात्मा का आश्रय लेकर जो कार्यदशा अरिहन्त परमात्मा, केवलदर्शन-केवलज्ञान, आनन्द और वीर्य प्रगट हुआ, ऐसी अनन्त दशायें प्रगट हुईं। उनसे विरुद्ध **विपरीत गुणोंवाले समस्त...** देव नहीं, अरिहन्त नहीं। **(देवाभास), भले देवत्व के अभिमान से दग्ध हों,...** हम देव हैं, ऐसे अज्ञान से जल गये हों, परन्तु वे देव नहीं हैं। आहा..हा..! जिनकी दिव्य शक्तियाँ समस्त प्रगट हो गयी है, ऐसे जो देव हैं, उनसे दूसरे ऐसा माने कि हम भी देव हैं, कहते हैं कि अभिमान से जल गये हैं बेचारे। आहा..हा..! **दग्ध हों, तथापि संसारी हैं...** भले अभिमान देव का हो। ऐसे परमेश्वर का जिन्हें भान नहीं और ऐसा परमेश्वरपना जिन्हें प्रगट नहीं हुआ और ऐसा मानते हैं कि हम देव हैं और हम परमेश्वर हैं, वे सब अभिमान से दग्ध हुए संसारी हैं। **ऐसा (इस गाथा का) अर्थ है।** लो, इस गाथा का यह अर्थ है। आहा..हा..!

परमेश्वर अर्थात् क्या? और परमेश्वरता प्रगट कैसे हुई? महाप्रभु ध्रुवस्वरूपवान की अन्तर एकाग्रता के अनुभव से प्रगट हुई, ऐसा। ध्रुव को सिद्ध किया, वीतरागपर्याय को सिद्ध किया और उसके कार्यरूप जो परमात्मा अनन्त केवलज्ञान आदि सत्ता का अस्तित्व प्रगट हुआ, उसे (सिद्ध किया)। ऐसे को देव कहा जाता है।

विशेष कहेंगे..... (**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)